International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Volume 01, No. 04, October - December, 2019, pp.51-56

लैंगिक उत्पीडन और जनहित वाद अनुछेद 32 के सन्दर्भ में

डॉ. सीमा शर्मा*

परिचय

भारतीय संविधान में न्याय, स्वतंत्रता और समानता की प्रतिभूति दी है तथा इन आदेशों को प्राप्त करने की कोशिश की गई है। संविधान की प्रस्तावना में ही इन आदर्शों को रेंखांकित किया गया है। इन आदर्शों को प्राप्त करने के लिए हमारे पास सरकार के तीन अंग है, विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका, इन तीनों में से तीनों अपने क्षेत्रों में सर्वोच्च अधिकारी है। संविधान के तहत दिये गये अंगो के अधिकारों और उनकी शक्तियों के पुनर्विलोकन के लिए न्यायालय की सर्वोच्चता स्वीकार की गई है। भारत में सर्वोच्च न्यायालय हमारे संविधान की सरंक्षा एवं न्यायिक प्रक्रिया के विधिक प्रयोग के लिए महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी गई है यह हमारे देश में एकता और अखण्डता की बहुत बड़ी शक्ति है। भारत में न्यायापालिका की भूमिका मानव अधिकारों के विकास एवं संरक्षण से भी जुड़ा हुआ है। जिसके विचार हमारें संविधान, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में और भारतीय संविधान द्वारा दिये गये निर्णयों में निहित हैं।

इस अध्याय में लोकप्रिय वाद की भूमिका का मूल्यांकन किया गया है यह लोगो के अधिकारों के संरक्षण का प्रभावशाली तंत्र है इस पृष्ठ भूमि में न्यायपालिका की उस प्रक्रिया को भी मूल्यांकित किया गया है जिसके तहत सामाजिक परिवर्तनों के बारे में उसकी भूमिका संसद द्वारा बनाये गये कल्याणकारी विधानों के संदर्भ में नियमित की गई है। मानवाधिकारों पर संवैधानिक विधियों के विकास का समकालीन समय में बहुत सारे तथ्य उपलब्ध है और इस प्रक्रिया में न्यायिक हस्तक्षेप के द्वारा मानवाधिकारों की सुरक्षा और प्रभावशीलता के बारे में तथ्य मौजूद है लोकहित वाद में निहित सिद्धान्त न्यायिक प्रक्रिया के विस्तार की सूचना देता है तथा सामान्य हितो की सुरक्षा एवं आम आदमी की शिकायतों को संबोधित करने की पहल के रूप में आशा की किरण जगाता है। इस याचिका की यांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा न्यायपालिका की संक्रियता के कारण गरीब कमजोर पद्दलित शोषित पीड़ित सामाजिक और आर्थिक रूप से असहाय लोगों को न्याय दिलाने में इसकी मुख्य भूमिका है।

महिला उत्पीडन और न्यायिक सक्रियता

मानव समाज के एक सिक्के के दे पहलू है नर और नारी। दोनों ही एक दूसरे के पूरक है। नर यदि आकाश सदृश विशाल और महान है तो नारी श्रेष्ठ की धारिणी है। अतः नर से श्रेष्ठ धारिणी हम सबकी सम्मान की पात्रा है। परन्तु जब हम इतिहास पर दृष्टिपात करते है तो उनमें अविच्छिन्न रूप से नारियों का क्रन्दन, उत्पीड़न एवं शोषण प्रतिबिम्बित होता है। भारतीय पृष्ठ भूमि में वैदिक काल से नारी के सम्मानीय पात्रता में ह्रास के चिन्ह प्राप्त होते है। इसकी क्रमबद्ध शुरूआत मध्य युग में अधिक जोरो से हुई। सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा प्रथा, देवदासी, रखैल प्रथा, पर्दा प्रथा आदि ऐसे मूक हाहाकार का दुभेद्य महल बनता रहा है।

समकालीन वर्षो में महिलायें के संसार में आये हुये परिवर्तनों के कारण कोई अचानक घटना पर आधारित नहीं रहे है। बल्कि कुछ निश्चित प्रवृत्तियों ने इस दिशा में महत्वपूर्ण भुमिका निभायी है। समाज में महिलाओं के साथ अन्याय के बारे में जागरूकता उनके अधिकारों और स्थितियों के बारे में विधि आयोग और राष्ट्रीय महिला आयोग की सक्रियता भी महत्पूर्ण रही है तथा न्यायपालिका की संवेदनशीलता जो महिलाओं से संबांधित हम मामले में रही है उससे भारत में स्त्री अधिकार आन्दोलनों का आधारभूत सहायता मिली है।

* पीडीएफ स्कॉलर, आईसीएसएसआर, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

सवैधानिक प्रतिबद्धता और महिला समस्या

भारतीय संविधान निर्माता भारत में मध्यकाल में नारी की दयनीय स्थिति से वाकिफ थे अतः वे जानते थे कि राष्ट्रीय विकास के लिए महिलाओं को उचित ओर व्यापक सुविधाएँ प्रदान करना अति आवश्यक है स्त्रियों के शैक्षणिक और आर्थिक अधिकारो को सुरक्षित रखा जाये और इसके लिए किसी भी तरह के सामाजिक अन्याय और शोषण से मुक्त रखा जाये। इस उदेश्य की पूर्ति के लिए भारतीय संविधान में तीन निम्न व्यवस्थाये की गई–

- लिंग के आधार पर किसी तरह के भेदभाव का निषेध किया गया।
- महिलाओं के समवर्ती के लिए विशेष प्रावधान किये गये और इस तथ्य के लिए मनोवैज्ञानिक जैविक स्थितियों का ध्यान रखा गया।
- राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तो के तहत महिलाओं के विशेष संदर्भ में राज्य को निर्देश दिये गये।

भारतीय संविधान में महिलाओं के संरक्षण के लिए तीन विशेष प्रावधान किये गये है–

- अनुच्छेद – 14 के तहत कानून में सभी व्यक्ति समान है और अनुच्छेद – 15 के तहत जाती, प्रजाति, लिंग और जन्म के आधार पर भेदभाव का निशेध किया और अनुच्छेद – 16 के तहत अवसरों की समानता उपलब्ध करायी गई है।
- शोषण के विरूद्ध अधिकार के अनुच्छेद – 23 द्वारा कराया गया मानव गरिमा का विचाार संविधान का मूल अर्थ है। जिसे तहत किसी तरह के मानव व्यापार का नि ोध किया गया है। मानव व्यापार का मतलब पशुओं और सामानों की तरह उसके देह के व्यापार से है।
- राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के तहत अनुच्छेद – 39 में सामाजिक न्याय और महिलाओं के विशेष सन्दर्भ में कुछ प्रावधान किये गये है। वास्तव में 39 अनुच्छेद – 38 का ही विस्तार है जिसमें राज्य को विशेष निर्देश दिये गये है।
  - सभी नागरिक स्त्री और पुरूष समान रूप से अपने जीविकोपार्जन के लिए उचित स्त्रोत रखने के लिए अधिकार है।
  - सभी स्त्री और पुरूषों को समान रूप से समान कार्य के लिए समान वेतन के अधिकार है।
  - कामगारों के स्वास्थ्य और शक्ति, स्त्री और पुरूष और बच्चों के कम उम्र में काम पर लगाने का किसी तरह की आर्थिक सहायता और मजबूरी में नहीं किये जाने चाहिए।
- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51 (क) के अन्तर्गत जो मुल कर्तव्यों से संबंधित है उसके तहत कुछ सामंतवादी व्यवहारों को न करने की मनाही की गई है जैसे सती प्रथा, बाल विवाह और दहेज।
- चुनाव अनुच्छेद – 325 के संविधान प्रावधानों के तहत एक आम सामान्य चुनाव की व्यवस्था की गई है। जिसके तहत धर्म, प्रजाति, लिंग आदि के आहार पर किसी भी प्रकार के राजनीतिक अंधिकारों के लिए भेदभाव का निषेध किया गया।
- घरेलु हिंसा संरक्षण अधिनियम – महिलाओं के खिलाफ घरेलु हिंसा कानून 26 अक्टूबर, 2006 से लागू हो गया है। इस कानून के तहत दोषी पाये जाने पर पंक्तियों को जेल के साथ 20 हजार तक जुर्माना भर पड़ सकता है। इस कानून की महत्वपूर्ण बात यह है कि यह सुरक्षित आवास की गारन्टी देता है। घर के अन्दर हिंसा के खिलाफ नारी आन्दोलन लम्बे समय से सक्रिय रहा है। शुरूआती दौर से इसका जोर दहेज हत्याओं पर रहा है। परिणामम: 1980 में दहेज सम्बन्धी कानून में सुधार हुआ तथा इसमें 498 (अ) और 304 (ब) जोड़ा गया। जिसका उदेश्य पति के परिवार में दहेज के अलावा अन्य हिंसा के मामले को देखना था। 1983 में बलात्कार विरोधी कानून में भी संशोधन कर इसे नैतिकता के दायरे से बाहर निकाल का हिंसा माना गया तथा स्त्री की स्वीकृति के बिना यौन सम्बन्ध को बलात्कार माना गया।

महिलाओं के उत्पीड़न एवं शोषण के विरूद्ध लोकहित वाद

महिलाओं को शोषण एवं उत्पीड़न के विरूद्ध न्याय दिलाने तथा उनके अधिकारों के संरक्षण हेतु न्यायालयों के द्वारा जनहित वादों के माध्यम से किये गये प्रयासों के संदर्भ में निम्नलिखित वाद विशेष उल्लेखनीय है।

बिहार के नारी निकेतन की बिगड़ती दशा को लेकर एक लोकहित याचिका उच्चतम न्यायालय में प्रेषित की गई। याचिका में इस संस्था की कुव्यवस्था पर प्रकाश डालते हुये कहा गया था कि उसके भवन की स्थिति अत्यन्त जीर्ण शीर्ण हो चुकी थी तथा छतों से यहां–वहां पानी टपकता था, कमरों में खिड़कियां नहीं है। महिलाओं को चारपाइयों तथा कंबलो के अभाव में खुले से सोना पड़ रहा है तथा शौचालय, स्नानगृह, तेल साबुन आदि की भी पर्याप्त व्यवस्था नहीं है। यह भी कहा गया कि भोजन के नाम पर प्रत्येक महिला पर प्रतिदिन केवल पांच रूपये खर्च किये जाते है। याचिका में किये गये वर्णन से द्रवीभूत होकर उच्चतम न्यायालय ने बिहार सरकार को निर्देश दिया कि उक्त नारी निकेतन की स्थिति में तत्काल सुधार किया जाए तथा नये भवनों का निर्माण करवाकर उसमें वे सभी सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं जो मानव गरिमा के अनुकूल हों। इसी प्रकार भोजन व्यवस्था को भी सुधरा जाए तथा नारी निकेतन की अन्तःवासी महिलाओं को तेल, साबुन, चारपाई, कंबल आदि जीवन के लिए आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराई जायें।

दिल्ली प्रजातांत्रिक कामकाजी महिला मोर्चा बनाम संघ के लोकहित वाद में सेना के सात जवानों ने रेल में यात्रा कर रही छः ग्रामीण लड़कियों के साथ बलात्कार किया। न्याायालय ने प्रकरण की गंभीरता को देखते हुये केन्द्र सरकार को निर्देश दिये कि प्रत्येक पीड़िता को दस हजार रूपये प्रतिकर के रूप में दिये जाएं तथा उन सभी लड़कियों के नाम तथा पहचान पूर्णतः गोपनीय रखे जाएं ताकि वे सामाजिक लांछन से बची रहे। न्यायालय ने राष्ट्रीय महिला आयोग को निर्देश दिया कि वह इस प्रकार की गंभीर आपराधिक हिंसा की पीड़ितों के लिये समुचित प्रतिकर तथा पुनर्वास की योजनाएं तैयार करें। रामेश्वर बनाम भारत संघ के वाद में छिंदवाड़ा (मध्यप्रदेश) के सत्र न्यायालय ने अभियुक्त रामेश्वर एक–एक 16 वर्षीय अवयस्क लड़की को शादी का झूठा वादा करके उसका अपहरण करने तथा यौन–शोषण के बाद छोड़ देने के अपराध के लिए चार वर्ष का कारावास तथा 500/– रूपयें जुर्माने की सजा दी थी, जबकि अपील में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने अभियुक्त द्वारा एक माह तीन दिन कारावास में भोगी गई सजा को पर्याप्त माना तथा इस आधार पर कि अपराध के समय अभियुक्त ग्रामीण क्षेत्र का अशिक्षित मजदूर था, उसे रिहा कर दिया। राज्य सरकार ने उच्च न्यायालय के इस रिहाई के फैसले के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील दायर की।

उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीश द्वय एन. सन्तोष हेगड़े एवं एस. बी. सिन्हा की पीठ ने अपने निर्णय में कहा कि इस प्रकरण में उच्च न्यायालय ने अपराध की प्रकृति, उसकी गंभरता तथा पीड़िता को इसके कारण समाज में हुई बदनामी पर विचार किये बिना दोषी व्यक्ति के साथ सहानुभूति रखते हुए उसकी सजा घटा दी और यह नहीं सोचा कि इसका पीड़िता पर क्या विपरीत प्रभाव पड़ेगा। माननीय न्यायाधीशों ने जोर देकर कहा कि केवल एक माह तीन दिन की भोगी हुई सजा पर दोषी अपराधी को छोड़ देना उसके द्वारा किये गये अपराध के अनुपात में बहुत कम दंड है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 366 के अन्तर्गत इसके लिये दस वर्ष की कारावास की सजा का प्रावधान है, जबकि सत्र–न्यायालय ने केवल चार वर्ष के कारावास की सजा दी थी, जो अपर्याप्त थी, और उसे भी उच्च न्यायालय ने घटा कर भोगी जा चुकी सजा तक सीमित कर दिया, जो कदापि न्यायोचित नहीं है।

महिलाओं के विरूद्ध बलात्कार एवं उनके शील भंग की घटनाओं को रोकने में भारत की अपराध विधि अक्षम रही है, इस आशय का एक खुला पत्र सन् 1979 को भारत के प्रधान न्यायाधीश को लिखा गया था इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप भारत सरकार ने मार्च, 1980 में विधि आयोग से अनुरोध किया कि वह बलात्कार संबंधी कानून में सुधार एवं संशोधन के बारे में अपने सुझाव प्राथमिकता के आधार पर प्रस्तुत करें विधि आयोग ने अपनी रिपोर्ट 15 अप्रैल, 1980 को सरकार को भेज दी जिसके परिणामस्वरूप संसद ने अपराध विधि (संशोधन) अधिनियम, 1983 पारित किया। बलात्कार के मामलों के संदर्भ में उच्चतम न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 21 में वर्णित जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार की व्यापक व्याख्या करते हुये अभिनिर्धारित किया है कि इसमें महिला की गरिमा तथा सम्मान का भी समावेश है, इसलिये बलात्कारी अपने दुष्कृत्य द्वारा महिला को केवल शारीरिक तथा मानसिक यातना ही नहीं पहुंचाता है, अपितु उसके स्त्रीत्व के बहुमूल्य अधिकार का भी हनन करता है। अतः बलात्कार का अपराध महिला के मानवीय एवं मौलिक अधिकार का उल्लंघन है जो महिला के लिये लांछनास्पद तथा अपमानजनक होता है।

गुडालूर चेरियन बनाम भारत संघ में एक लोकहित याचिका द्वारा उच्चतम न्यायालय का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया था कि पुलिस द्वारा अन्वेषण में लापरवाही बरतने के कारण चार बलात्कार के आरोपियों के विरूद्ध अपराध साबित नहीं हो सका और वे दण्डित होने से बच गये जिसके फलस्वरूप, बलात्कार की शिकार हुई महिला को भयंकर मानसिक संत्रास तथा अपमान झेलना पड़ा। इस वाद के तथ्य इस प्रकार थे :–

दिनांक 12ध्13 जुलाई, 1990 की रात्रि में लगभग 2 बजे कुछ उपद्रवी व्यक्ति उत्तर प्रदेश के गजरोला स्थित सेंटमेरी कान्वेन्ट स्कूल में घुसे तथा उन्होंने दो महिलाओं सिस्टर तारा एवं सिस्टर रूजालिट के साथ बलात्कार किया तथा अन्य सिस्टरों तथा नौकरानियों के साथ शारीरिक छेड़छाड़ की। भागने के पूर्व उन्होंने अलमारी तोड़कर उसमें से 1,11,000/–रूपये भी लूट लिये जो कि अगले दिन स्कूल के कर्मचारियों के वेतन के भुगतान हेतु रखे हुये थे। गजरौला पुलिस को इसकी शिकायत की जाने पर उसने इकबाल तथा अन्य तीन के विरूद्ध आरोप पत्रदाखिल किया, परन्तु अन्वेषण में ढील तथा लापरवाही के कारण समुचित साक्ष्य के अभाव में अभियुक्त के विरूद्ध आरोप सिद्ध न हो सका और उन्हें रिहा कर दिया गया। इस रिहाई के विरूद्ध एक जनहित याचिका दायर करते हुए पूरे मामले की जाँच केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (CBI) से कराये जाने की मांग की गई। जाँच के पश्चात! यह पाया गया कि पुलिस स्टेशन के प्रभारी तथा मुरादाबाद अस्पताल के डाक्टरों की लापरवाही के कारण प्रकरण के साक्ष्य लुप्त हो चुके थे जिसके परिणामस्वरूप दोषी व्यक्तियों के विरूद्ध आरोप सिद्ध नहीं हो सका। इस पर उच्चतम न्यायालय ने उत्तर प्रदेश सरकार को निर्देश दिये कि संबंधित पुलिस अधिकारियों तथा चिकित्सकों को तत्काल निलंबित किया जाए तथा उनके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ की जाए, साथ ही बलात्कार की शिकार हुई प्रत्येक महिला को ढाई लाख रूपये प्रतिकर के रूप में दिये जाएं तथा अन्य पीड़ितों को एक लाख रूपये प्रति महिला के हिसाब से क्षतिपुर्ति राशि का भुगतान किया जाए। न्यायालय ने इस बात पर दुःख प्रकट किया कि राज्य के पुलिस और चिकित्सकों की लापरवाही के कारण उक्त महिलाओं के बहुमूल्य मानव गरिमा के अधिकार का उल्लंघन हुआ है जो उन्हें संविधान के अधीन मौलिक अधिकार के रूप में प्राप्त है।

ज्वाला देवी बनाम भूप सिंह के वाद में पुलिस अधिकारियों ने एक वृद्ध महिला के साथ मारपीट कर उसे यातनाएं पहुंचाई तथा उसके मुंह पर बूटपॉलिश की कालिख पोतकर उसे सड़क पर घुमाया और अपमानित किया। यद्यपि न्यायालय ने उक्त आरोप सिद्ध नहीं हो सके, इसलिये याची की क्षतिपूर्ति की मांग नामंजूर कर दी गई परन्तु फिर भी उच्चतम न्यायालय ने राज्य को आदेश दिया कि वह याचिकादात्री को 5000 की राशि क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान करें। इस संदर्भ में सहेली (महिला संसाधन केन्द्र) बनाम पुलिस कमिश्नर, दिल्ली का वाद विशेष उल्लेखनीय है। यह वाद अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत दायर की गई एक जनहित याचिका से उद्भूत हुआ था जिसमें महिलाओं के सिविल राइट्स संगठन द्वारा दिल्ली पुलिस के अवैध कारनामों को उजागर किया गया था।इस वाद के तथ्य इस प्रकार थेः–

एक महिला जो किराये के कमरे में रहती थी, मकान का स्वामी उसे कमरा खाली करने के लिये धमकाता रहता था। एक दिन उसने पुलिस अधिकारियों की सहायता से उक्त महिला पर हमला करके उसका शीलभंग किया उसके नौ वर्षीय पुत्र के साथ भी इन लोगों ने दुर्व्यवहार किया और उसे चोटें पहुँचाई। पुलिस वालों ने महिला के विरूद्ध झूठी शिकायत दर्ज कर उसे हवालात में बंद कर दिया। इसके बारह दिनों बाद उसके पुत्र की मृत्यु हो गई। अतः सहेली नामक महिला सेवी संस्था ने महिला के पुत्र की मृत्यु कारित करने के विरूद्ध महिला को प्रतिकर दिलाये जाने हेतु जनहित याचिका दायर की। न्यायमूर्ति रे ने निर्णय देते हुए कहा कि महिला के पुत्र नरेश की मृत्यु मकान मालिक तथा पुलिस द्वारा उसे चोंटे पहुँचाने तथा प्रताड़ित करने के कारण हुई है इसलिये महिला क्षतिपूर्ति की हकदार है, जो दिल्ली प्रशासन द्वारा की जानी चाहिये। न्यायालय ने विनिश्चित किया कि राज्य का दायित्व है कि वह अपने कर्मचारियों के अपकृत्यों के लिये पीड़ित व्यक्ति की क्षतिपूर्ति करे तथा तथा वह संप्रभु शक्ति के अधीन किये गये कार्य की दलील के आधार पर इस दायित्व से बच नहीं सकती। अतः राज्य सरकार मृतक बालक की माता को 75,000– की राशि क्षतिपूर्ति के रूप में भुगतान करें।

पी० रथीनम् बनाम भारत संघ के लोकहित वाद में याचिका द्वारा बलात्कार के मामलों में आपराधिक न्याय प्रशासन की कमियों की ओर उच्चतम न्यायालय का ध्यान आकृष्ट किया था। इस वाद में गुजरात पुलिस

कर्मियों द्वारा किसी गुंताबेन नामक महिला के साथ बलात्कार किया गया था। उसे लोगों के सामने निर्वस्त्र करके एक ट्रक के केबिन में इन लोगों ने उक्त महिला को अपनी हवस का शिकार बनाया था। यह घटना 1986 की थी जिसके विरूद्ध एक अधिवक्ता ने जनहित में याचिका दायर की। उच्चतम न्यायालय द्वारा मामले की जाँच के आदेश दिये जाने पर 504 लोगों की साक्ष्य ली गई तथा केन्द्रीय जाँच ब्यूरो ने जाँच में अत्यधिक समय लगाया। केन्द्रीय जाँच ब्यूरो की रिपोर्ट के अनुसार उच्चतम न्यायालय द्वारा नियुक्त जाँच आयोग की रिपोर्ट के बावजूद राज्य सरकार ने दोषी पुलिसकर्मियों के विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं की। इस हेतु 1986 से 1993 के बीच दो आयोग भी नियुक्त किये गये, लेकिन तब भी राज्य सरकार द्वारा अन्वेषण पूरा नहीं किया गया। अतः न्यायालय ने जाँच लम्बित रहने के दौरान गुंताबेन को क्षतिपूर्ति के रूप में 5000 रूपये देने हेतु राज्य को निर्देश दिये क्योंकि मामले की कार्यवाही सन् 1993 तक पूरी नहीं हो सकी थी।

उपर्युक्त याचिका का प्रभाव यह हुआ कि त्रिपुरा में असम राइफल्स के जवानों द्वारा 25 महिलाओं को बलात्कार का शिकार बनाये जाने की समाचार वार्ता को राज्य ने गंभीरता से लिया तथा असम राइफल्स के अधिकारियों के साथ मिलकर मामले को दबा देने की पूरी कोशिश की, परन्तु इसमें सफल न होने पर पीड़ित महिलाओं को प्रतिकर दिया जाने हेतु सहमति दर्शाई। दिल्ली डोमेस्टिक वर्किंग वूमन्स फोरम बनाम भारत संघ के वाद में यौन शोषण की शिकार हुई महिलाओं की मनोदशा एवं व्यथा को अनुभव करते हुये उच्चतम न्यायालय ने ऐसे प्रकरण के अन्वेषण एवं विचारण के दौरान अपनाए जाने हेतु कतिपय मापदंडो का निर्धारण किया, जो निम्नानुसार थे –

- लैंगिक शोषण की शिकार हुई महिलाओं को पुलिस द्वारा पूछताछ से लेकर विचारण की समाप्ति तक पूरी अवधि में सक्षम अधिवक्ता की सेवाएं उपलब्ध कराई जानी चाहिए।
- पुलिस का यह कर्तव्य है कि वह पीड़िता को यह सूचित करे कि विधिक सहायता प्राप्त करने का अधिकार उसे प्राप्त है।
- संबंधित अधिवक्ता उसे विधिक सहायता के अलावा अन्य परामर्श तथा चिकित्सीय सहायता भी उपलब्ध कराएगा।
- प्रकरण के प्रारंभ से अंत तक पीड़िता की पहचान पूर्णतः गोपनीय रखी जाएगी।
- अभियुक्त के विरूद्ध यौन अपराध सिद्ध होने की दशा में न्यायालय पीड़िता के अधिकारों के हनन के लिये उसे उचित प्रतिकर दिलाएगा।
- प्रतिकर की राशि के निर्धारण हेतु राज्यों को आपराधिक आघात प्रतिकर बोर्ड की स्थापना करनी चाहिये, जो पीड़िता को उस स्थिति में भी प्रतिकर दिला सके, जब अभियुक्त दोषमुक्त कर दिया गया हो।

पी० रथिनम बनाम भारत संघ, 1986

भारतीय संविधान के अनुच्छेद–32 के तहत गुजरात में गुप्ता बेन के पुलिस द्वारा सामुहिक बलात्कार के सन्दर्भ में एक अधिवक्ता द्वारा यह याचिका दायर की गयी। 15 जनवरी 1986 के दिन गुप्ता बेन के घर से बाहर ले जाते समय एक ट्रक में पुलिस के कई जवानों ने बलात्कार किया। उसे बिल्कुल नंगा कर दिया गया और पुलिस थाने पहुँचने से पहले ही उसके साथ कई लोगों ने मुँह काला किया। पुलिस ने पहले प्रथम सूचना रिपोर्ट लिखने से इन्कार किया। लेकिन 12 जनवरी, 1986 को पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज की और याचिका में उस घटना की जांच की मांग की गई।

गौरव जैन बनाम भारत संघ और अन्य

गौरव जैन ने अनुच्छेद 32 के तहत एक याचिका दायर की जिसमें उन्होंने वेश्याओं के बच्चों की शिक्षा के लिए विशेष विद्यालय खोलने की मांग रखी। न्यायालय ने अपना निर्णय दिया– ''बच्चों को अपने विशेष समुदाय से बाहर रखा। कोई महत्वपूर्ण विचार नहीं है बल्कि उन्हें अपने माता और अपने घर से मुक्त रखना चाहिए। श्रीमान बी. सी. महाजन, श्रीमान् गौरव जैन, आर. के. मेहता, डॉ० दीपदास, श्रीमती सरला मुद्गल, श्रीमती कृष्णा मुखर्जी और श्रीमान् एम. एन. सर्राफ को मिलाकर कोर्ट में एक समिति का गठन किया और समिति को अपनी रिपोर्ट सौंपने का निर्देश दिया गया।''

विशाल जीत बनाम भारत संघ और अन्य

विशाल जीतन नामक अधिवक्ता ने अनुच्छेद 32 के तहत बच्चों के देह शोषण से संबंधित अन्वेषण ब्यूरों द्वारा निरीक्षण करने की मांग की। कोर्ट को नौ बालिका शिशुओं के अनुभव को बताया गया। याचिका में महिलाओं और लड़कियों के देह शोषण की तरफ ध्यान आकर्षित किया।

जैसिका लाल बनाम मनु शर्मा का मामला

इस मामले मे जैसिका लाल की हत्या के मुख्य आरोपी मनु शर्मा का दिल्ली की अधिनस्थ न्यायालय ने बरी कर दिया। महिला संगठनों ने इस का पुरजोर विरोध किया। तब दिल्ली हाईकोर्ट ने संज्ञान लिया तथा मामले की सुनवाई दुबारा हुई इसमें मनु शर्मा को दोषी पाया गया और उम्र कैद की सजा सुनाई गई।

उन्नाव दुष्कर्म वादः– सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायधीश श्रीमान् रंजन गोगोई ने पीड़िता के द्वारा भेजे गये पत्र के न मिलने पर नाराजगी जताते हुए वाद को उत्तर प्रदेश से दिल्ली स्थानान्तरित करने और शीघ्र सुनवाई करने की व्यवस्था की जो महिलाओं के प्रति न्यायिक सक्रियता का उदाहरण महिला उत्पीड़न के वाद निरन्तर बढ़ रहे है। जिनके प्रति बदलाव तभी सम्भव है। जब समाज अपनी सोच बदलने का प्रयास करें।

सन्दर्भ सूची

- प्रकाशनारायण नाटाणी, भारत में न्यायपालिका, (अवि कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2005)
- सरफराज अहमद खान, लोक अदालत, (एच. पी. एच. पब्लिकेशनस कारपोरेशन, नई दिल्ली, 2006)
- नताशा अरोड़ा, प्राचीन भारत में न्याय व्यवस्था, (स्वाती पब्लिकेशनस्, नई दिल्ली, 1990)
- बालमुकुंद अग्रवाल, हमारी न्यायपालिका, (नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली, पॉचवी आवृत्ति, 2005)
- डी. डी. बसु, ''भारत का संविधान'' (वाधवा एण्ड कम्पनी नई दिल्ली, 2005)
- प्रकाश नारायण नाटाणी, 'भारत का संविधान' (साहित्य सागर, जयपुर–2005)
- भारत का संविधान सैन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 2005
- के. सी.जोशी, अन्तर्रा ट्रीय विधि और मानवाधिकार, (इस्टर्न बुक कम्पनी, नई दिल्ली–2003)
- एन. ई. साइमण्डस, जुरिसप्रुडेन्स : जस्टिस, ला, इण्ड राइट, (ईस्टन बुक कम्पनी, नई दिल्ली, 2003)
- अरूणा राय – भारत में जनहित याचिका और मानवाधिकार, (राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2003)
- डी. डी. बसु, सांविधानिक विधानों में मानवाधिकार, (भारत का प्रेंटाइस हाल, नई दिल्ली, 1994)
- वी. के. मलहोत्रा – कल्याणकारी राज्य और भारत का सर्वोच्च न्यायालय, (द्वीप प्रकाशन, नई दिल्ली 1986)
- बी. सिंह. भारत का सर्वोच्च न्यायालय एम. एम. सामाजिक न्याय तंत्र के रूप में, (स्टलिंग पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1976)

❖◆❖